इकाई 10 ग्रामीण औद्योगिकीकरण कार्यक्रम

संरचना

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 संकल्पनात्मक विहंगावलोकन

10.3 भारत में ग्राम उद्योगों के संवर्धन के लिए नीतियाँ : एक विहंगावलोकन

10.4 सरकार की नीतियों का प्रभाव

10.5 ग्रामीण कृषीतर सेक्टर

10.5.1 संवृद्धि की तीन अवस्थाएँ

10.5.2 दो संबद्ध परिकल्पनाएँ

10.6 भावी नीति के लिए रणनीति

10.7 सारांश

10.8 शब्दावली

10.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

10.10 बोध प्रश्नों के उत्तर/संकेत

10.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के बाद, आप :

- ग्राम औद्योगिकीकरण रणनीति में अंतर्निहित अवधारणाओं की परिभाषा कर सकेंगे;
- भारत में ग्राम उद्योगों के संवर्धन के लिए विभिन्न नीति पहलों की रूपरेखा प्रस्तुत कर सकेंगे;
- ग्राम औद्योगीकरण के लिए अपनाई गई नीतियों के प्रभाव का विश्लेषण कर सकेंगे;
- ग्रामीण कृषीतर सेक्टर (RNFS) की मुख्य विशेषताओं का वर्णन कर सकेंगे; और
- नीति पुनार्भिन्यास के लिए रणनीति समझा सकेंगे।

10.1 प्रस्तावना

इकाई 1 में, हमने अध्ययन किया है कि भारत जैसी कृषि अर्थव्यवस्थाओं में कृषि में अतिरिक्त (अधिशेष) श्रमिकों के लिए उद्योगों/सेवाओं जैसे गैर-कृषि सेक्टरों में रोज़गार प्राप्त करना कैसे सुकर बनाया जाना आवश्यक है। यह निम्नलिखित कारणों से अपेक्षित है : (i) कृषि में रोज़गार का मौसमी स्वरूप; (ii) ऐसे छोटे और सीमांत किसानों की बहुत बड़ी संख्या जो कृषि कार्य पर जीवन निर्वाह करते हैं, और प्रायः बेरोज़गार रहते हैं; (iii) कृषि श्रमिक परिवार की अल्प शैक्षिक और आर्थिक दशाएँ, और (iv) कृषि अकेले सभी ग्रामीण कामगारों को पूरा रोज़गार देने में पर्याप्त नहीं है। इस इकाई

में हम इस बारे में अध्ययन करेंगे कि ग्राम औद्यौगिकीकरण कार्यक्रम को, सामान्य तौर में ग्रामीण श्रमिक बल के लिए, विशेष रूप से ग्रामीण गरीबों के लिए, आय अर्जन के रास्ते बढ़ाने के लिए भारत में नीति साधन के रूप में कैसे अपनाया गया है। इस दिशा में छह से अधिक दशाब्दियों में क्या परिणाम हुआ है? क्या इस दृष्टिकोण की संभावनाओं की सफल प्राप्ति के लिए कोई पूर्व शर्तें अपेक्षित हैं? ग्रामीण कृषीतर सेक्टर की प्रगति के बारे में क्या कोई निश्चित सैद्धांतिक धारणा प्रस्तुत की गई है? ये ऐसे प्रश्न हैं जिनका उत्तर हम इस इकाई में ढूंढ़ने का प्रयास करेंगे। हम इस संदर्भ में प्रयुक्त कुछ महत्त्व शब्दों से जुड़ी संकल्पनाओं के संक्षिप्त विहंगावलोकन से ही चर्चा का प्रारंभ करेंगे।

10.2 संकल्पनात्मक विहंगावलोकन

ग्राम औद्योगिकीकरण के विकास का परिणाम तीन प्रकार से रोज़गार अवसरों पर होगाः (i) अपेक्षाकृत बेहतर शिक्षितों के लिए नियमित रोज़गार; (ii) निरक्षरों के लिए दैनिक मज़दूरी किस्म का रोजगार; और (iii) उनके लिए स्वरोज़गार के अवसर, जो उद्यमवृत्ति की ओर बढ़ना चाहते हैं। यह निश्चित तथ्य है कि ग्रामीण श्रमिक बल की बहुत भारी संख्या गरीब और अशिक्षित है इसलिए ग्राम औद्योगिकीकरण की नीति का ध्यान दूसरे एवं तीसरे प्रकार के रोज़गार अवसर उत्पन्न की ओर होना चाहिए। हम इकाई के बाद के भागों में देखेंगे कि कुल रोज़गार के अनुपात के रूप में स्वरोज़गार का भाग बहुत अधिक है। उद्यमवृत्ति कार्य प्रारंभ करने के लिए आवश्यक पूर्व शर्त उसके लिए अपेक्षित विभिन्न संसाधन जुटाने की क्षमता है। अपेक्षित मुख्य संसाधन हैं : (i) श्रमिक या जनशक्ति, निवेश के लिए साख, कच्चा माल, मशीनरी के लिए ऋण, कच्चे माल को तैयार माल बनाने की प्रक्रिया की दक्षता, उत्पादित माल के लिए उपयुक्त बाजार का पता लगाने की क्षमता। इन प्रयुक्त संसाधनों की मात्रा के आधार पर स्थापित उपक्रम का स्वरूप ''उद्यम'' के प्रचालन के अनुसार भिन्न-भिन्न होगा। ये या तो व्यक्तिगत परिवार स्तर पर (अर्थात् ''पारिवारिक उद्योग'' के रूप में) संचालित किए जा सकते हैं या पृथक स्तर पर ''गैर-पारिवारिक उद्योग'' के रूप में चलाए जा सकते हैं। इस प्रकार के पारिवारिक उद्योग (HHI) का स्वामित्व या तो व्यक्तिगत स्वामित्व के आधार पर या भागीदारी के आधार पर हो सकता है। ग्राम औद्योगिक सेक्टर की बहुत सी अन्य निश्चित विशेषताओं ने समय गुजरने के साथ सुनिश्चित शब्दावलियों के विकास में योगदान किया है। हम नीचे कुछ महत्त्वपूर्ण शब्दों के अर्थ और अभिधान से परिचित होंगे।

उद्योग

उद्योग शब्द का अभिप्राय आर्थिक 'माल' या 'सेवा' का उत्पादन है। शब्द के अर्थ के मूल में पारिवारिक खपत (अर्थात् स्वयं अपने उपभोग) की आवश्यकताओं के स्तर से काफी अधिक उत्पादन की मात्रा निहित है। दूसरे शब्दों में, ऐसे उद्यम के उत्पादन का कम से कम एक भाग बाजार के लिए होना चाहिए। प्रयुक्त मुख्य या अधिकांश सामग्री के आधार पर उद्योग को उसकी किस्म से पहचाना जाता है। उदाहरण के लिए, उद्योग खाद्य उत्पादों, वस्त्र उत्पादों, काष्ठ उत्पादों, कागज़ उत्पादों आदि का हो सकता है।

ऐसे उद्योग, जो अपने कच्चे माल के लिए कृषि सेक्टर पर आश्रित होते हैं, उन्हें कृषि आधारित उद्योग कहा जाता है। कृषीतर आधारित उद्योगों के उदाहरण हैं : धातु,

मशीनरी, मरम्मत सेवाएँ आदि। उद्योगों के वर्गीकरण की पद्धति को राष्ट्रीय उद्योग वर्गीकरण (NIC) कहा जाता है, जो व्यापक उद्योग समूह के अधीन आने वाले सभी उद्योगों को विनिर्दिष्ट करती है। नए उद्योगों और समूह को समायोजित करने के लिए समय-समय पर NIC संशोधित किया जाता है। व्यापक स्तर पर (I-अंक स्तर पर है) NIC अर्थव्यवस्था को नौ उद्योगों में वर्गीकृत करता है। ये हैं : (i) कृषि; (ii) खनन; (iii) विनिर्माण; (iv) विद्युत, जल, गैस आदि (ये मिलकर ''उपयोगिताएँ' कहलाती हैं); (v) निर्माण कार्य; (vi) व्यापार; (vii) परिवहन और संचार, भंडारण ओर माल गोदाम; (viii) वित्त और बैंकिंग; और (ix) लोक प्रशासन, कार्मिक और अन्य सेवाएँ।

ग्राम उद्योग

ग्राम औद्योगिकीकरण रणनीति/कार्यक्रम के मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में रोज़गार के अवसर पैदा करना और ग्रामीण क्षेत्रों से शहरों में प्रवासन कम करना है। इसके लिए आवश्यक है कि उद्योग ग्रामीण क्षेत्रों के अन्दर या ऐसे स्थानों में स्थित हों जहां से प्रत्येक ग्रामवासी रोज़गार के लाभ प्राप्त कर सकें। इस प्रकार ''ग्राम उद्योग'' को उद्योगों या स्थापना के समावेशन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जो निम्नलिखित में से किसी भी तरीके में ग्रामीण लोगों को रोज़गार और आय अर्जन के मार्ग प्रदान करता है : (i) स्थानीय संसाधनों और कौशल पर आधारित (या निर्भर) उद्योग जो मुख्यतया स्थानीय मांग पूरा करते हों; (ii) स्थानीय रूप से उपलब्ध किसी प्रमुख आदान पर आधारित उद्योग जो अन्यत्र संसाधनों/बाजारों से संबद्ध है; और (iii) ग्रामीण स्थानों पर आधारित उद्योग परंतु न तो स्थानीय संसाधनों (श्रमिकों सहित) पर निर्भर है और न ही स्थानीय बाजार को अपना उत्पादन बेचते हैं। ग्राम उद्योग या तो सरकार या विशाल निजी सेक्टर संगठनों के स्वामित्व के हो सकते हैं या स्थानीय या बाहरी उद्यमियों द्वारा औपचारिक रूप से स्थापित किये जा सकते हैं।

उद्यम बनाम स्थापना

औद्योगिक उपक्रमों के माप का विभेद करने के लिए दो बुनियादी मापदंड प्रयुक्त किए जाते हैं; (i) नियुक्त व्यक्तियों की संख्या; और (ii) प्रयुक्त ''पूँजी'' की सीमा। भाड़े पर रखे गए श्रमिकों के बिना संचालित उद्यम (पूरी तरह से परिवार के सदस्यों के श्रम संचालित) को ''स्वश्रम चालित उद्यम'' नाम दिया गया है। यदि परिवार से बाहर का एक भी व्यक्ति भाड़े पर रखा जाता है तब यह उद्यम एक 'स्थापना' कहा जाता है। लगाई गई पूँजी की सीमा पर आधारित उद्यमों का वर्गीकरण के तीन प्रकार है जैसे (i) लघु/अतिलघु उद्यम जिसमें चालू निवेश की सीमा 25 लाख रुपए से कम रहती है (यह पहले केवल 1 लाख रुपए थी)। (ii) सहायक लघु उद्योग (SSI) इकाई, जिसमें 25 से 100 लाख का निवेश हों, तथा लघु उद्यम, जिसमें 100-500 लाख रुपए की सीमा में पूँजी निवेश किया गया हो। इसलिए यह स्पष्ट है कि गरीब ग्रामीण परिवारों द्वारा स्थापित या तो पारिवारिक उद्यम या गैर-पारिवारिक उद्यमों को अधिकांशतः अति लघु इकाइयों की श्रेणी में रखना सर्वथा उचित हो सकता है। अन्य दो वर्ग (अर्थात् सहायक और लघु उद्योग) साधारणतया ग्रामों की भौगोलिक सीमाओं के अंदर या उसके बाहरी इलाकों में उन उद्यमियों द्वारा स्थापित इकाइयाँ हो सकती हैं जिनमें अधिक पूँजी जुटाने की क्षमता होती है। ऐसी इकाइयाँ ग्रामीण श्रमिकों को मज़दूरी के अवसर प्रदान करती हैं। इस प्रकार के उद्यमों पर निवेश की उच्चतम सीमा बदलते हुए मूल्य स्तरों के अनुरूप बनाने के लिए समय-समय पर संशोधित की जाती हैं। उद्यमों में माल या सेवाओं (जैसे विनिर्माण उद्यमों या सेवा उद्यमों के रूप में) के उत्पादन के आधार पर भी विभेद किया जाता है।

आर्थिक सेक्टर

अर्थव्यवस्था को मोटे तौर पर तीन आर्थिक सेक्टरों में वर्गीकृत किया जाता है। जैसे प्राथमिक, माध्यमिक और तृतीयक। **प्राथमिक** सेक्टर का संबंध उन सभी कार्यकलापों (या उद्यमों) से है जिनमें उत्पाद भूमि और अन्य प्राकृतिक संसाधनों, जैसे जल, पशु आदि प्राप्त या उत्पन्न किए जाते हैं। इसलिए कृषि और संबद्ध कार्यकलाप, जैसे मत्स्यपालन, डेयरी, कुक्कट पालन, और खनन प्राथमिक सेक्टर कार्यों के उदाहरण हैं। **माध्यमिक** सेक्टर का संबंध उन उद्यमों से है जिनमें प्राथमिक सेक्टर से नए कच्चे माल का प्रयोग करके नए मूल्यवर्धित उत्पादों का विनिर्माण किया जाता है। माध्यमिक सेक्टर के उदाहरण हैं : सभी कृषि आधारित उद्योग, कृषीतर आधारित उद्योग, विद्युत, निर्माण कार्य आदि। माध्यमिक सेक्टर के बहुत बड़े भाग का संबंध साधारतया विनिर्माण कार्य से भी है। इसलिए ''विनिर्माण उपयोगिता और निर्माण'' मिलकर द्वितीयक सेक्टर बनाते हैं। अन्य सभी कार्य, जैसे व्यापार, होटल और रेस्टोरेंट, परिवहन, संचार, बैंकिंग और वित्तीय, कानून और व्यवस्था; न्यायपालिका; लोक प्रशासन तथा धार्मिक सेवाएँ तृतीयक या सेवा सेक्टर के अधीन आते हैं। स्वामित्व के आधार पर दो अन्य वर्गीकरण भी हैं : (i) सार्वजनिक/निजी; और (ii) संगठित/असंगठित। पूर्वोक्त का संबंध सरकारी या विशाल निजी सेक्टर उपक्रमों से है जबकि दूसरे का संबंध संगठन के स्वरूप से है जो पंजीकृत या अपंजीकृत स्वरूप की उसकी कानूनी प्रस्थिति पर निर्भर है। हम नीचे (रोज़गार के स्थिर/अस्थिर प्रकार विभेद के अनुसार वर्गीकरण पर) विस्तार से चर्चा करेंगे।

पारिवारिक सेक्टर

अर्थव्यवस्था के उत्पादक क्षेत्रों के वर्गीकरण का एक अन्य प्रकार भी है जिसमें अर्थव्यवस्था को पारिवारिक सेक्टर और गैर-पारिवारिक सेक्टर में विभाजित किया जाता है। कानून द्वारा सभी उद्यमों को 'पंजीकरण (या निगमन) के अधीन प्रचालन करना आवश्यक है जिससे राष्ट्रीय लेखाकरण की पद्धति अपनाना संभव हो जाता है। जिन उद्यमों में विनिर्दिष्ट उच्चतम सीमा से अधिक कामगार काम पर लगाए जाते हैं, इस प्रकार के पंजीकरण का उद्देश्य उनमें नियुक्त कामगारों के कार्य और सेवा शर्तों की सुरक्षा करना है। विभिन्न अधिनियम जैसे कारखाना अधिनियम, कर्मचारी राज्य बीमा अधिनियम, दुकान और वाणिज्यिक स्थापना अधिनियम आदि ऐसे विधायनों के उदाहरण हैं जिनके अधीन उद्यमों का पंजीकरण अनिवार्य बनाया गया है। परंतु अधिक छोटे उद्यमों या स्थापनाओं को जिनमें भाड़े पर नियुक्त कामगारों की संख्या शून्य या बहुत कम होती है (उदाहरण के लिए, जैसे दस या कम यदि बिजली प्रयोग कर रहे हों, 20 या कम यदि कारखानों अधिनियम द्वारा बिजली का प्रयोग नहीं कर रहे हैं) इस प्रकार के अनिवार्य पंजीकरण से छूट प्राप्त है। इसलिए शब्द ''पारिवारिक सेक्टर'' का संबंध अपंजीकृत उद्यमों से है। पारिवारिक सेक्टर की परिभाषा सीमा से बाहर होने वाले उद्यम (अर्थात् सभी नियमित या पंजीकृत उद्यम) गैर-पारिवारिक सेक्टर के हैं। भारत के संदर्भ में पारिवारिक सेक्टर के सभी उद्यमों को अनौपचारिक या असंगठित सेक्टर उद्यम भी कहा जाता है। उनके विपरीत औपचारिक या संगठित क्षेत्र है, जिसमें कामगार रोजगार शर्तें सामाजिक सुरक्षा प्रावधानों द्वारा संरक्षित की जाती है, जैसे सुस्पष्ट मज़दूरी और सेवा शर्तें, सवेतन अवकाश, सेवानिवृत्ति लाभ आदि। भारत में औपचारिक या संगठित क्षेत्र के अधीन आने वाले कुल श्रमिक बल में कामगारों का अनुपात बहुत निम्न है (लगभग 7 प्रतिशत)। आर्थिक विकास दर में वृद्धि के साथ अनौपचारिक सेक्टर

में कामगारों का प्रतिशत समय के साथ-साथ नीचे आने की संभावना है। अनौपचारिक/असंगठित सेक्टर के अधीन आने वाले विशाल 93 प्रतिशत श्रमिक बल में से अधिकांश कृषि क्षेत्र में है। कृषि के अलावा, अनौपचारिक/असंगठित गैस्कृषि कार्यों का बहुत बड़ा भाग ग्रामीण क्षेत्रों में होता है। बहुत से ग्रामीण औद्योगिक कार्य स्वरूप में अनौपचारिक होते हैं। सभी औपचारिक और अनौपचारिक कृषीतर कार्यों को ग्रामीण कृषीतर सेक्टर कहा जाता है।

ग्रामीण गैर-फार्म सेक्टर बनाम गैर-कृषिक सेक्टर : शब्द ग्रामीण गैर-फार्म सेक्टर ग्रामीण क्षेत्रों में ऐसे सभी कार्यों या उद्यमों के लिए प्रयुक्त होता है जो फार्म सेक्टर अर्थात् कृषि और अनुषांगिक कार्यों की सीमा के बाहर है। इसलिए ग्रामीण क्षेत्रों में विनिर्माण, निर्माण, व्यापार, संचार, बैंकिंग और वित्त आदि (अर्थात् द्वितीय और तृतीयक सेवा' सेक्टर कार्यों के अधीन आने वाली सभी कार्यकलाप) के अधीन आने वाले सभी कार्यकलापों का उल्लेख ग्रामीण गैर-फार्म सेक्टर के कार्यों के रूप में किया जाता है। शब्द ''गैर-कृषिक'' शब्द ''कृषिक'' विपर्याय हैं। यद्यपि कृषिक कार्यों का उल्लेख ''खेती'' जैसे जोताई, बोआई, खाद डालने, कीटनाशी दवा डालने सिंचाईं, कटाई की अवस्था से उस अवस्था तक के लिए किया जाता है तथा जो काम कटाई के बाद भंडारण, संसाधन, पैकेजिंग, विपणन आदि जैसे कार्य करने के लिए किए जाते हैं। वे सभी कार्य गैर-कृषिक कार्यों के अधीन आते हैं। ध्यान रहे कि गैर-कृषि सेक्टर केवल वृहत्तर गैर-फार्म सेक्टर का उपभाग है। यह नोट करना भी महत्त्वपूर्ण है कि यद्यपि फार्म सेक्टर उत्पादकता की वृद्धि और गैर-कृषिक सेक्टर का विकास एक स्तर पर पारस्परिक सहयोगशील सुचक्र बनाते हैं वे दूसरे स्तर पर गैर-फार्म, गैर-कृषिक सेक्टर एक साथ मिलकर संपूर्ण ग्रामीण कृषीतर सेक्टर की वृद्धि के लिए अति आवश्यक उत्प्रेरक प्रोत्साहन प्रदान करते हैं। इस प्रकार, विकास की संपूर्ण प्रक्रिया पर चक्रीय प्रभाव होता है जिसमें प्रत्येक सेक्टर की प्रगति दूसरे की प्रगति में योगदान करता है।

उपर्युक्त से स्पष्ट है कि कृषि में लगे हुए कामगारों के लिए वैकल्पिक रोज़गार/आय के अवसर उपलब्ध कराने के लिए, हमें ग्रामीण गैर-फार्म सेक्टर के उद्यमों के विकास पर ध्यान देना आवश्यक है। इस सीमा तक कि बहुत बड़ी संख्या में कृषि श्रमिक छोटे और सीमांत किसान होते हैं। उद्योगों के लिए चाहे कितना भी छोटा क्यों न हो, उसके लिए कम से कम प्रारंभिक अवस्था में थोड़ी पूंजी निवेश की आवश्यकता होती है। इसके साथ-साथ ऐसे उद्योगों की स्थापना को प्रोत्साहित करने के प्रयासों के लिए ग्राम में और उसके समीप दोनों में अधिक पूँजी निवेश की आवश्यकता होती है जो अधिक कुशल व्यक्तियों के लिए रोज़गार के अवसर उत्पन्न कर सकता है। इस दिशा का लाभ उठाने के लिए ग्रामीण श्रमिकों के लिए अल्पकालिक कौशल विकास कार्यक्रम संचालित कर दक्षता विकास पर ध्यान देना आवश्यक है। प्रसंस्करण, पैकेजिंग, मार्केटिंग आदि के लिए ऋण और अन्य सुविधाओं की आवश्यकता पूरी करने पर भी साथ-साथ फोकस करना आवश्यक होगा जिसके बिना ग्रामीण गैर-फार्म सेक्टर की प्रगति गंभीर रूप से रुक सकती है।

संक्षेप में, ग्रामीण श्रमिक बल के लिए रोज़गार के अवसर बढ़ाने का अभिप्राय संकल्पनात्मक रूप से ग्रामीण और गैर-फार्म उद्यमों (अनौपचारिक सेक्टर किस्म के) की स्थापना प्रोत्साहित करने और गैर-कृषिक कार्यों के विकास के लिए अपेक्षित सहायक बुनियादी सुविधा स्थापित करने के लिए नीति निर्माण पर फोकस करना है। पिछली

छह से अधिक दशकों के दौरान सरकार द्वारा किए गए निश्चित प्रयास और ग्रामीण रोज़गार पर अनके प्रभाव ऐसे मुद्दे हैं जिन पर हम अब विचार करेंगे।

बोध प्रश्न 1

नीचे दिये रिक्त स्थान पर 50 शब्दों में अपना उत्तर दीजिए

1) शब्द ''उद्योग'' सामान्यतया कैसे परिभाषित किया गया है? वे कौन-से तीन तरीके हैं जिन में संसाधनों/मार्केट से उनके सहसंबधन द्वारा विशेष रूप में ''ग्रामीण उद्योग'' परिभाषित किया जा सकता है?

.....

.....

.....

.....

2) सेक्टर संबंधी विशेषताओं का भिन्न-भिन्न तरीकों से उल्लेख कीजिए जो भारत जैसी श्रम बहुल अर्थव्यवस्था के रोजगार परिदृश्य की विशेषता बताती है। NIC के अधीन वर्गीकृत नौ औद्योगिक श्रेणियाँ क्या हैं?

.....

.....

.....

.....

3) निवेश आकार पर किए गए उद्योगों के वर्गीकरण के तीन प्रकार क्या हैं? इन में से किस पर अधिक ध्यान देना चाहिए और क्यों?

.....

.....

.....

.....

4) क्या आप सहमत हैं कि 'गैर-कृषिक' सेक्टर 'गैर-फार्म' सेक्टर का उपभाग है? क्यों?

.....

.....

.....

.....

10.3 भारत में ग्राम उद्योगों के संवर्धन के लिए नीतियाँ : एक विहंगावलोकन

नीति स्तर पर बहुत पहले ही प्रथम औद्योगिक नीति संकल्प (IPR), 1948 में, सरकार ने ग्राम उद्योगों को विशेष स्थान दिया था। IPR 1948 उल्लेख करता है कि ''कुटीर

तथा लघु उद्योगों'' की स्थापना से अनिवार्य उपभोक्ता मात्र जैसे भोजन, वस्त्र और कृषि औजार आदि का बेहतर उत्पादन हो सकता है। इसके अनुसरण में पहली पंचवर्षीय योजना (1951-56) में कुटीर उद्योगों को ''परंपरागत शिल्प कौशल'' के पर्याय के रूप में स्वीकार करते हुए अधिक स्पष्ट विशिष्टता निर्धारित की गई। इस विशिष्टता के अधीन कुटीर उद्योगों की ऐसी संकल्पना की गई जिसमें मुख्य रूप से पारिवारिक श्रम द्वारा किए गए कार्यों में दस्ती कार्य प्रचालन अंतर्निहित हो। योजना ने भाड़े पर कुछ न कुछ श्रमिकों को काम पर लगाकर मशीनी उपकरणों का प्रयोग करते हुए माल और सेवाएँ उत्पादन करने वाली इकाइयों को लघु उद्योगों का नाम दिया था। इस विवरण के अधीन कुटीर उद्योगों की भूमिका का अभिप्राय मुख्यतया ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोज़गार और अल्प रोजगार की समस्या का सामना करना था।

दूसरा IPR और दूसरी तथा तीसरी पंचवर्षीय योजनाएँ

दूसरे औद्योगिक नीति संकल्प (IPR-1956) ने दो भागों को एक में मिला दिया और इसे ''कुटीर ग्राम और लघु उद्योग सेक्टर'' (अर्थात् संक्षेप में, CVSS सेक्टर) नाम दे दिया। IPR ने उत्पादन की मात्रा पर उच्चतम सीमा निर्धारित CVSS सेक्टर के लिए विभेदक कराधान तथा प्रत्यक्ष राज सहायता प्रदान कर इससे बड़े सेक्टर औद्योगिक से अलग स्वरूप दिया था। नीति ने बल दिया कि लघु उत्पादकों की प्रतिस्पर्धात्मक शक्ति में सुधार किया जाना चाहिए ताकि वे समय के चलते स्वावलंबी हों। दूसरी पंचवर्षीय योजना (1956-61) ने भी उल्लेख किया कि उपभोक्ता माल की बहुत विविध किस्में CVSS सेक्टर से आनी चाहिए। बहुत आलोचकों ने उल्लेख किया कि ''कुटीर और ग्राम'' और ''लघु सेक्टर'' की संवृद्धि की नीति फोकस का अभाव दिखाती है क्योंकि उद्योगों के दो समूहों के समक्ष कठिनाइयाँ बहुत भिन्न थीं। यद्यपि ''कुटीर उद्योग' और स्वस्वामित्व उद्योग बहुत छोटी स्थापनाएँ हैं जो 5 से कम श्रमिकों को नियुक्त करती हैं और लघु उद्योग आकार और प्रचालन की मात्रा में काफी अधिक बड़े हैं। ग्रामीण सेक्टर में कुल श्रमिक बल का लगभग 85-90 प्रतिशत (बहुत बड़ा) भाग कुटीर उद्योगों में लगा हुआ है और इसलिए उनके हितों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। किंतु योजना में नीतिगत बल, आमतौर पर निम्नलिखित पर रहाः (i) औद्योगिक विस्तार की प्रक्रिया बढ़ाना और ग्रामीण क्षेत्रों में फैलाना, और (ii) सेक्टर से आशा की गई थी कि यह धीरे-धीरे अपने परंपरागत स्वरूप में अपना उन्नयन करेगा और ''आधुनिक लघु औद्योगिक इकाई'' का रूप ग्रहण करेगा परंतु क्रियान्वयन प्रभाव वास्तव में बहुत सीमित रहा। कृषि सेक्टर और ग्रामीण औद्योगिकीकरण प्रयासों के बीच अधिक सुदृढ़ सहसंबंध धीरे-धीरे आगे बढ़ाने के प्रयास के रूप में चुनिन्दा सामुदायिक विकास खंडों में 26 प्रायोगिक परियोजनाओं का आरंभ किया गया। इन परियोजनाओं के अनुभव का विस्तार बाद में तृतीय पंचवर्षीय योजना में ''ग्रामीण औद्योगिक परियोजना'' (RIP) गठित करने के लिए किया गया। स्वीकृत विकास संबंधी उद्देश्य देश के सभी भागों में ''ग्राम और लघु उद्योगों (VSI) सेक्टर के विस्तार द्वारा संतुलित क्षेत्रीय विकास'' की उपलब्धि के रूप में पुनः प्रचारित किये गए। इससे यद्यपि ''VSI सेक्टर'' शब्दावली प्रचलित सरकारी अभिधारणा हो गयी, परंतु ''लघु उद्योग सेक्टर'' से कुटीर और ग्राम उद्योगों असंबद्ध करने की प्रत्याशा की गई (बाद में इसे स्वरूप अपेक्षाकृत उच्चतर पूँजी आवश्यकताओं से पृथक किया गया) परिणामस्वरूप अधिक तीव्र नीतिगत फोकस का अभाव जारी रहा।

ग्रामीण उद्योग और पिछड़े क्षेत्र विकास योजना (चौथी और पांचवीं योजनाएँ)

चौथी पंचवर्षीय योजना (1969-74) में ग्रामीण औद्योगिकीकरण के प्रयासों को ''पिछड़ा क्षेत्र विकास कार्यक्रम'' (BADP) नाम की नई परियोजना से ग्रामीण औद्योगिकीकरण के प्रयास से जोड़ा गया। कार्यक्रम में अधिक व्यापक विकास के केंद्रों के रूप में कार्य करने के लिए छोटे कस्बों और ग्रामीण क्षेत्रों में संवृद्धि केंद्रों की स्थापना की संकल्पना की गई थी। वांचू और पांडे कार्य दल की सिफारिशों का अनुसरण करते हुए पिछड़े क्षेत्रों में औद्योगिक इकाइयाँ स्थापित करने के लिए निजी उद्यमियों को वित्तीय, राजकोषीय और अन्य सहायता सेवाएँ (जैसे कच्चे माल की आपूर्ति, माल खरीद, मूल्य वरीयता, गुणवत्ता नियंत्रण, विपणन सहायता, आदि) प्रदान करने के लिए कार्यक्रम प्रारंभ किए गए। इसके अतिरिक्त, योजना ने RIP कार्यक्रम का विस्तार 49 कस्बों/जिलों तक किया। पांचवी योजना (1974-79) ने 15,000 तक की जनसंख्या के सभी कस्बों को शामिल करने के लिए RIP कार्यक्रम का विस्तार किया और 15,000 से अधिक जनसंख्या के कस्बों में प्रचालन करने के लिए BADP का पुनः अभिविन्यास किया।

छठवीं और सातवीं योजनाएँ : ग्राम और कुटीर उद्योगों पर अधिक बल

यद्यपि VSI शब्द का प्रयोग एकीकृत तरीके में प्रयुक्त किया जाता रहा। परंतु छठीं और सातवीं योजना अवधियों (1980-85 और 1985-90) लघु उद्योग (SSI) इकाइयों से कुटीर तथा ग्राम उद्योग (CVIs) पृथक करने का भेद लागू किया। 1978 में आरंभ किए गए नये गठित जिला उद्योग केंद्रों (DICs) को प्रत्येक जिले में VSIs के संवर्धन के लिए समग्र उत्तरदायित्व के साथ शक्ति प्रदान करते हुए छठी योजना ने उल्लेख किया कि लघु उद्योग सेक्टर के अंतर्गत ''अतिलघु सेक्टर'' पर विशेष ध्यान दिया जाएगा। इस पर अधिक बल देने के लिए 'कुटीर और पारिवारिक उद्योगों'' के लिए विशेष विधेयन प्रस्तुत किया गया था ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि इनके कार्यकलापों को उचित मान्यता प्राप्त होती रही है। यह नोट करना महत्त्वपूर्ण है कि यद्यपि अति लघु इकाइयों पर नीतिगत बल में भिन्नता का उल्लेख किया गया था, परंतु बहुत से अन्यों द्वारा यह विचार भी प्रस्तुत किया कि CVI में ''परंपरागत दस्तकारी स्वरूप'' पर बल ने उस सीमा तक CVI इकाइयों का गतिशील पक्ष स्वीकार करने में असफल होने से उसकी गति मंद करने में योगदान किया और उसे स्थैतिक बना दिया। दूसरे विचार ने दो सुविचारित तर्कों को आकर्षित किया : जैसे (i) सभी तीन आर्थिक सेक्टर, चक्रीय निर्भरता, अर्थव्यवस्था की चहुंमुखी समग्र वृद्धि की प्रगति और योगदान द्वारा आपस में सहायता प्राप्त करते हैं; और (ii) CVI को उन्हें प्रौद्योगिक दृष्टि से उन्नत तथा श्रेष्ठ बनाने के लिए उपाय प्रारंभ कर गतिशील बनाना आवश्यक है। संभवतः यह इस बात की अनुभूति यह है कि सातवीं योजना (1985-90) ने ''प्रौद्योगिकी उन्नयन के माध्यम से उत्पादन गुणवत्ता बढ़ाकर लागत कटौती प्राप्त कर और उत्पादन मिश्रण की पुनर्संरचना कर'' संपूर्ण VSI सेक्टर की उत्पादकता सुधारने पर बल दिया। अति लघु सेक्टर की वित्तीय कठिनाइयों के समाधान के लिए ''लघु और कुटीर उद्योग सेक्टर'' के लिए विभिन्न संस्थाओं द्वारा दी गई ऋण सुविधाओं की संपूर्ण श्रेणी का समन्वय करने के लिए भारत के औद्योगिक विकास बैंक में विशेष घटक बनाया गया था। इसके अलावा, शहरी क्षेत्रों में कारीगरों के पलायन रोकने की दृष्टि से ''ग्राम उद्योगों और कारीगरों'' के लिए पृथक आयोग स्थापित करने के सुझाव का संकेत भी सातवीं योजना में दिया गया था।

उदारीकरण पश्चात् WTO की बाध्यताएँ और निःशर्त नीतिगत सहायता का मंथन

1991 में प्रारंभ की गई नई औद्योगिक नीति ने औद्योगिक संवर्धन के दृष्टिकोण में भारी परिवर्तन किए। धीरे-धीरे संरक्षण और संवर्धन के स्थान पर बाजार अभिमुखता और प्रतिस्पर्धा की दिशा में उपाय प्रारंभ हुए। आठवीं पंचवर्षीय योजना (1992-97) 1991 में एक वर्ष पहले प्रारंभ किए गए आर्थिक उदारीकरण की पृष्ठभूमि से शुरू हुई। CVI सेक्टर के लिए गतिशीलता उत्पन्न करने के लिए SSI ढांचे में निर्यातोन्मुखी इकाइयों का नया वर्गीकरण लागू किया गया था। CVI और SSI इकाइयों के बीच आगे विभेद किया गया जिसमें अविछिन्न आधार पर CVI इकाइयों (जैसे अति लघु उद्यमों) को बहुत लाभ जैसे संस्थागत वित्त की अधिक आसान सुलभता, सरकारी खरीद में प्राथमिकता, आदि दिए गए परंतु यही SSI इकाइयों के लिए सीमित कर दिए गए (कि वे केवल एक बार प्राप्त कर सकते हैं)। इस बात पर भी ध्यान दिया गया कि SSI इकाइयों को भी सहायता प्राप्त और अधिक सस्ता संस्थागत ऋण पर्याप्त और समय पर उपलब्ध हो। दूसरी ओर, लघु और अति लघु उद्यमों को तत्काल भुगतान अधिनियम पर कानून यह सुनिश्चित करने के लिए बनाया गया कि लघु/अतिलघु उद्योगों के बिलों का भुगतान समय पर हो। कृषि और उद्योग के बीच अधिक सुदृढ़ सहसंबंध बढ़ाने के लिए SSI इकाइयों के लिए एकीकृत आधारभूत संरचना विकास की नई योजना लागू की गई थी। इस सभी पहल कार्यों के बावजूद बाजार आधारित संकेतों और मांग को उचित महत्त्व देने पर भी बल था। इसके अधीन (i) आदान/मूल्य/विपणन सहायता का धीरे-धीरे उन्मूलन; (ii) बजट सहायता पर कम निर्भरता; (iii) प्राइवेट पहल कार्यों पर बढ़ा हुआ विश्वास और जोखिम उठाने की क्षमता जैसी विशेषताएँ प्रारंभ की गईं।

नौवीं से ग्यारहवीं योजना अवधियाँ

नौवीं योजना (1997-2002) में अति लघु इकाइयों की प्रतिस्पर्धी शक्ति बढ़ाने की आवश्यकता महसूस करते हुए 1999-2000 में इन इकाइयों को ''बैकिंग सेक्टर'' द्वारा प्राथमिकता ऋण की परिभाषा के अधीन लाया गया। राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम (NSIC) के तत्वाधान में एक प्रतिशत की अतिरिक्त सहायता प्राप्त रियायती ब्याज दर पर ''अति लघु सेक्टर'' के लिए विशेष वित्तीय पैकेज लागू किया गया। 2006 में ''सूक्ष्म, लघु और मध्यम उद्यम अधिनियम (MSME अधिनियम–2006) इस किस्म के उद्यमों की संवर्धन और विकास प्रतिस्पर्धात्मकता बढ़ाने के उद्देश्य से पास किया गया। अधिनियम का उद्देश्य बैंक ऋण की सुलभता, पूँजी और प्रौद्योगिकी की सुलभता, कौशल विकास/उन्नयन, बाजार आदि की समस्याओं का समाधान करने के लिए संस्थागत ढाँचा प्रदान करना है। ग्राम और लघु उद्योग (VSI) विनिर्माण सेक्टर में पर्याप्त मात्रा में रोज़गार के लिए जिम्मेदारी निभा रहा है। 2006 में स्वसंचालित उद्यमों ने विनिर्माण सेक्टर में अकेले 76.8 प्रतिशत रोज़गार दिया परंतु यदि हम भाड़े पर रखे गए पांच से कम कामगारों को रोज़गार देने वाले सभी स्थापनाओं को जोड़े तब विनिर्माण कार्य में सभी श्रमिकों का प्रतिशत और अधिक (अर्थात् 86.9 प्रतिशत) होता है।

पिछले पांच दशकों के दौरान ग्राम और लघु उद्योगों के संवर्धन और विकास के लिए कई विशेषज्ञ संस्थाएं और कार्यक्रम प्रारंभ किए गए। इस संबंध में निम्नलिखित पहल कार्य प्रमुख हैं : (i) खादी और ग्रामोद्योग बोर्ड, राष्ट्रीय लघु उद्योग निगम और लघु

उद्योग सेवा संस्थानों की (सभी 1956-61 में) स्थापना; (ii) एकीकृत ग्राम विकास कार्यक्रम (1987); (iii) एकीकृत आधारभूत संरचना विकास केंद्रों की स्थापना के लिए योजना (1989-91); (iv) 24 राज्यों के 71 पिछले खंडों में रोज़गार पैदा करने के लिए जिला विशेष रोज़गार कार्यक्रम (1992-93); (v) हाथ से निर्मित कागज उद्योग, चमड़ा उद्योग और मधुमक्खी पालन उद्योग के संवर्धन के लिए ग्रामोद्योगों पर राष्ट्रीय परियोजना; (vi) खादी और ग्रामोद्योग के विकास के लिए ग्रामीण रोज़गार कार्यक्रम (1994-2001); (vii) बाँस और बेंत उद्योग के लिए समूह विकास कार्यक्रम (1998-1999); (viii) प्रत्येक वर्ष 100 समूहों के लिए ग्राम औद्योगिकीकरण के लिए राष्ट्रीय कार्यक्रम (1999-2000); (ix) दो वर्षों में 7.6 लाख रोज़गार पैदा करने के उद्देश्य से कृषि ग्राम उद्योगों के संवर्धन के लिए प्रधानमंत्री रोज़गार योजना (2000-03); और (x) भारतीय लघु उद्योग विकास बैंक (SIDBI) और राष्ट्रीय कृषिक एवं ग्रामीण विकास बैंक (NABARD) के स्थापना में केवल ऐसे कुछ हैं जो 1950 से 2000 तक के 50 वर्षों की अवधि के दौरान स्थापित या क्रियान्वित किए गए थे।

यद्यपि ये सभी प्रयास अभी भी जारी हैं, 1991 के बाद के वर्षों के नीति वातावरण में बाजार आधारित नीतिगत सहायता की जड़ें भी सुदृढ़ता से स्थापित हो गई हैं। 1995 में WTO की स्थापना ने तैयारी की भावना पर अधिक फोकस के साथ विकसित करने पर बल दिया ताकि ''अधिक मुक्त आयात'' और ''आक्रामक निर्यात'' की व्यवस्था में प्रतिस्पर्धा करने में आने वाली बाधाकारी चुनौतियों का सामना कर सकें।

यद्यपि उपर्युक्त विहंगावलोकन से ग्रामीण क्षेत्रों में रोज़गार पैदा करने के लिए ग्राम औद्योगिकीकरण प्रोत्साहन करने के लिए सरकार द्वारा दी गई अविछिन्न नीतिगत सहायता की जानकारी प्राप्त होती है, परंतु यह देखना रोचक होगा, क्या ऐसे अनुभवजन्य प्रमाण भी उपलब्ध हैं जिनसे कालांतर में इन नीतियों के प्रभाव की सीमा का आकलन कर सकें।

10.4 सरकार की नीतियों का प्रभाव

1984-85 से 2005-06 की अवधि के रोजगार के आंकड़े और विनिर्माण इकाइयों की संख्या (तालिका 10.1) दर्शाती है कि 20 वर्षों की अवधि के दौरान पूर्णकालिक रोजगार और इकाइयों की संख्या में गिरावट आई है। हम विशेष रूप से स्व-संचालित उद्यमों पर फोकस कर रहे हैं क्योंकि यह अति लघु इकाइयों की वृद्धि है जिनसे ग्रामीण क्षेत्रों में अपेक्षाकृत अधिक सुविधा वंचितों को रोज़गार देने की आशा की जाती है। प्रति इकाई औसत रोज़गार 1985-2001 के दौरान बढ़ा है। परंतु यह फिर 2006 में अपने 1985 के स्तर पर नीचे आ गया। इसलिए प्रथम दृष्टि में यह सुझाव देने के लिए कोई निर्णायक अनुभवजन्य प्रमाण नहीं है कि 1985-2006 की अवधि ने VSI सेक्टर के लघुतम भाग में विनिर्माण कार्यों के कारण ग्रामीण क्षेत्रों में रोज़गार और इकाइयों की संख्या के अनुसार कोई उल्लेखनीय परिवर्तन देखा है। परंतु अंशकालिक रोज़गार के अनुसार 1985-2006 की संपूर्ण अवधि में अनुकूल वृद्धि हुई है। यह प्रमाण देता है कि अति लघु इकाइयों को कुछ सीमा तक ग्राम औद्योगिकीकरण द्वारा कारण रोज़गार स्तर को सुधारने में योगदान किया है।

तालिका 10.1 : स्व-संचलित ग्रामीण असंगठित विनिर्माण कार्यों में रोज़गार

वर्ष	रोज़गार का प्रकार (मिलियन में)			इकाइयों की संख्या (मिलियन में)	प्रति इकाई औसत रोज़गार (कुल रोज़गार का)
	पूर्णकालिक	अंशकालिक	योग		
1984-85	18.99	3.25	21.91	13.44	1.63
2000-01	14.87	4.28	19.15	11.06	1.73
2005-06	13.52	4.52	18.02	11.11	1.62

नोट : स्रोत (i) दास के (2009), (ii) आंकड़े own account उद्यमों और ग्रामीण क्षेत्रों से संबंधित हैं।

तालिका 10.2 : ग्रामीण क्षेत्रों में कुल बैंक ऋण में प्रतिशत अंश 1996-2007

वर्ष	1996	1997	1998	1999	2000	2001	2002	2003	2004	2005	2006	2007
कारीगर	2.0	2.2	2.0	2.1	1.7	1.3	1.7	1.5	1.5	1.2	1.0	1.1
SSI	6.6	6.0	5.1	5.6	4.8	4.1	3.2	2.6	3.0	2.6	2.6	2.5

स्रोत : दास के, 2000

ग्राम औद्योगिकीकरण प्रगति में प्रत्याशित प्रगति के अभाव के प्रमुख निर्धारक तत्वों में एक ''औद्योगिक ऋण'' की सुलभता में ह्रास है। (तालिका 10.2) ''कारीगरों'' और ''SSI इकाइयों'' के लिए बैंक ऋण के प्रतिशत शेयर में 1996-2007 अवधि के दौरान लगातार ह्रास देखा गया है। यह इस तथ्य के बावजूद हुआ है कि वर्ष 1999-2000 में ''अतिलघु सेक्टर'' को विशेष ''प्राथमिकता सेक्टर'' नीति के अधीन लाया गया था। यद्यपि अपेक्षाकृत अधिक बड़े SSI सेक्टर के लिए भी परिस्थिति समान रूप से कठिन थी (जिनकी क्षमता अतिलघु इकाइयों की क्षमता की तुलना में संस्थागत ऋण की आवश्यकताओं के लिए अधिक अनुकूल थी) यह अतिलघु इकाइयों द्वारा अपनी पूँजी आवश्यकताओं के लिए सामना की गई खास कठिनाइयों को व्यक्त करता है। उपर्युक्त साक्ष्य इस दृष्टिकोण का समर्थन करता है कि ग्राम औद्योगिकीकरण नीतियाँ वैसी नहीं बनाई गई जैसी शताब्दी के अंतिम चतुर्थांश में और 1990 की दशाब्दी की उदारीकरण बाद आशा की गई थी। इसलिए ग्राम औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया के लिए संस्थागत ऋणों की उपलब्धता निःसंदेह सीमाकारी कारक रहा है, फिर भी हमें अब यह देखना चाहिए कि, इस मंद प्रगति में किन-किन अन्य कारकों का योगदान रहा है। हम इस पर अगले भाग में विचार करेंगे।

बोध प्रश्न 2

अपने उत्तर नीचे रिक्त स्थान पर लिखिए।

1) ''लघु उद्योग'' किस तरह ''कुटीर उद्योग'' से भिन्न है?

.....

.....

.....

2) नीतिगत ध्यान आकर्षित करने के लिए लघु उद्योगों से कुटीर उद्योगों की बराबरी उचित ठहराने के लिए विश्लेषणकर्ताओं द्वारा क्या वैकल्पिक विचार प्रस्तुत किया गया है? क्या आप इस विचार का समर्थन करते हैं?

.....

.....

.....

.....

3) किस योजना में पहली बार ''लघु उद्योगों'' से ''कुटीर और ग्रामोद्योग'' का स्पष्ट विभाजन किया गया था? वे कौन-से **तीन** क्षेत्र हैं जिनके संबंध में 1990 के दशक में प्रवर्तित सरकारी नीति से ''छोटी इकाइयों'' के प्रतिपादन में प्रमुख परिवर्तन हुआ?

.....

.....

.....

.....

4) स्थापित की गई पांच प्रमुख संस्थाओं का उल्लेख कीजिए और 1951-2000 के बीच भारत में ग्राम उद्योगों को प्रोत्साहित करने के लिए सरकार द्वारा क्रियान्वित कुछ प्रमुख कार्यक्रमों के नाम बताइए।

.....

.....

.....

.....

5) उदारीकरण पश्चात् अवधि में छोटी औद्योगिक इकाइयों द्वारा के सामने आई एक मुख्य कठिनाई क्या रही है?

.....

.....

.....

.....

10.5 ग्रामीण कृषीतर सेक्टर

हमने भाग 10.2 में देखा है कि कृषीतर सेक्टर में प्रगति ग्रामीण औद्योगिकीकरण के सफल विकास की प्रक्रिया का स्वाभाविक परिणाम है। ग्रामीण कृषीतर सेक्टर की प्रगति पर साहित्य ने उसकी सफल संवृद्धि के लिए कई पूर्व शर्तों की पहचान की है। दो मुख्य कारक हैं : पर्याप्त बुनियादी भौतिक और आर्थिक आधारभूत संरचना, जैसे (i) अच्छा परिवहन, पर्याप्त बिजली, भंडारण और बैंकिंग सुविधाएँ आदि; और (ii) स्थानीय अर्थव्यवस्था से बाहर की वृहद् औद्योगिक अर्थव्यवस्था से ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि और कृषीतर सेक्टर के बीच सुविकसित सक्रियात्मक संबंध। खासतौर पर भारतीय अर्थव्यवस्था

और आमतौर पर दक्षिण एशियाई अर्थव्यवस्था की इन दोनों दिशाओं में प्रमुख कमजोरी ही दिखाई दी है। चीन की सफलता पर प्रचुर साहित्य है। वह न केवल उपर्युक्त दोनों दिशाओं सफल हुआ है बल्कि प्रौद्योगिकी उन्नयन और कौशल निर्माण पर भी वहां स्पष्ट फोकस रहा है। भारतीय दशाएं देश के कुछ समृद्धशाली राज्यों को छोड़कर ग्रामीण कृषीतर (RNF) सेक्टर को मुख्यतः प्रथम अवस्था में रखती है। इस संबंध में तीन अवस्थाओं की क्या विशेषताएँ हैं, उनका विवरण नीचे दिया गया है।

10.5.1 संवृद्धि की तीन अवस्थाएँ

रूपांतरण की **पहली अवस्था में RNF सेक्टर** निम्नलिखित की ओर अग्रसर होता है :

- ग्रामीण आबादी के बहुत बड़े भाग को सीधे रोजगार देकर कृषि से उत्पादन या व्यय का कृषि से सहसंबंधन होना;
- RNF कार्यों में ग्रामीण-शहरी पश्च अग्र सहसंबंधन पर कम निर्भरता से कस्बों/शहरों के अधिक समीप केंद्रित होने की प्रवृत्ति;
- RNF कार्य मुख्यतया गृह आधारित हो सकते हैं।
- बहुत कम मात्रा का उत्पादन जो व्यापार के लिए नहीं है (जैसे ऐसा माल जो मुख्यतया स्थानीय रूप से बेचा जाता है)। ऐसा माल ग्रामीण क्षेत्रों के बदले गांव के अंतरस्थ भाग में उत्पादित किया जाता है; और
- फार्म/गैर-फार्म सहसंबंधन के अनुसार कृषि में निम्नलिखित पर निर्भर होने की प्रवृत्ति होती है : (i) फार्म निवेश और सेवाओं की स्थानीय आपूर्तियाँ; और (ii) फार्म उत्पादों का स्थानीय प्रसंस्करण और वितरण। यह कार्य सामान्यतया छोटे से मध्यम आकार की कंपनियों द्वारा किया जाता है, जिनमें भारत के संदर्भ में 1 से 10 तक कामगार भाड़े पर काम पर लगाए जाते हैं।

रूपांतरण की **दूसरी अवस्था में RNF सेक्टर** की पहचान निम्नलिखित से होती है :

- जैसे कृषि से सहबंधन और अन्यों से जैसे खनन पर्यटन आदि से भी सहसंबंधन आदि स्थितियों के अधिक मिश्रण की ओर प्रवृत्ति;
- कृषि पर निर्भर रहने वाले ग्रामीण समुदाय का अंश RNF रूपांतरण की पहली अवस्था की तुलना में स्पष्ट रूप में घट सकता है;
- वस्त्रों के मामले में कम टिकाऊ शहरी व्यापार का उपठेका देकर RNF रोज़गार के आधार के रूप में ग्रामीण शहरी सहबंधन की मात्रा में वृद्धि;
- देहाती और ग्रामीण कस्बों के बीच श्रमिक शक्ति के अंतरण में तीव्र वृद्धि;
- छोटे और मध्यम की तथा विशाल स्थापनाओं की भी कृषि औद्योगिक इकाइयों की तेज़ी से वृद्धि; और
- ग्रामीण और अर्ध ग्रामीण स्थानों एक ही उत्पाद का उत्पादन करने वाली अपेक्षाकृत पूँजी प्रधान स्थापनाओं के साथ-साथ लघु श्रमिक प्रधान उत्पादन उद्यमों का सहअस्तित्व।

रूपांतरण की **तीसरी अवस्था में RNF** निम्नलिखित विशेषताओं द्वारा पहचाना जाता है:

- उन विशेषताओं की तीव्रीकरण जो पहली अवस्था से दूसरी अवस्था को अलग करती हैं;
- उप ठेका व्यवस्था और बढ़े हुए श्रम अंतरण से प्रेरित ग्राम-शहर सहसंबधन की अधिक मात्रा;
- कम टिकाऊ से मध्यम टिकाऊ वस्तुओं, जैसे वाहनों के कलपुर्जों से भी आगे उप ठेकों का विस्तार;
- कृषि से सहसंबंधन के बाद उत्पन्न होने वाला पर्याप्त RNF रोजगार; और
- वाणिज्यिक कृषि प्रथाओं/सिद्धांतों पर आधारित तीव्र कृषि औद्योगिकीकरण।

जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, दक्षिण एशिया और अफ्रीका को RNF रूपांतरण की पहली अवस्था में माना जाता है। रूपांतरण की दूसरी अवस्था में लेटिन अमेरिका और RNF रूपांतरण की तीसरी अवस्था में पूर्वी एशिया को कहा जाता है।

10.5.2 दो संबद्ध परिकल्पनाएँ

ग्राम औद्योगिकीकरण की प्रक्रिया के परिणामों की इष्टतम प्राप्ति के लिए अपेक्षित दशाओं पर दो परिकल्पनाओं की प्रस्तुति की गई है। यद्यपि एक प्रौद्योगिकी प्रेरित कृषि प्रगति पर बल देती है, परंतु दूसरी फार्म पर-फार्म से परे विकास के माध्यम से पूँजी आकर्षित करने के लिए श्रम बहुल क्षेत्रों के कारकों की पहचान करता है।

जॉनस्टन–मेल्लोर अभिकल्पना

मेल्लोर (1978) ने गैर-फार्म सेक्टर की कृषि संचालित संवृद्धि पर आधारित अभिकल्पना प्रस्तुत की। उसने उल्लेख किया कि कृषि सेक्टर में प्रौद्योगिकी प्रेरित प्रगति का परिणाम ग्रामीण विविधीकरण हो सकता है। गैर-फार्म सेक्टर (उर्वरक, बीज, शाकनाशी, पम्प, स्प्रेअर, उपकरण और मरम्मत सेवा आदि) कृषि से उत्पादन में प्रयुक्त आदानों द्वारा उसकी संवृद्धि में योगदान कर सकता है। प्रतिस्वरूप पेराई/ (मिलि का) प्रसंस्करण कार्य प्रोत्साहित हो सकते हैं। दूसरी ओर, बढ़ती हुई फार्म आय से बुनियादी उपभोक्ता माल के लिए बढ़ा हुआ उपभोग सहबंधन बढ़ सकता है जो समय के चलते खाद्य इत्तर मदों में फैल सकता है। इस दृष्टिकोण के आगे सुधार में जानस्टॉन मेल्लोर ने बाद में ग्रामीण क्षेत्रों और छोटे कस्बों दोनों में गैर-कृषिक माल और सेवाओं की मांग में अधिक वृद्धि करने के साथ उच्च भूमि उत्पादकता को संबद्ध किया है। इस प्रकार, फार्म उत्पादकता और गैर-कृषिक कार्य पारस्परिक समर्थित विकास का सद्भावनापूर्ण चक्र बनता है। पंजाब और अन्य राज्यों में हरित क्रांति की प्रगति को भारत में देखा गया। इस किस्म की संवृद्धि का उदाहरण माना गया है। मेल्लोर की अभिकल्पना दो आवश्यक मान्यताओं के अधीन लागू होती है, जैसे (i) कृषि और कृषीतर के बीच निकटतम सहसंबंधन गांव के और/या ग्राम के निकटतर क्षेत्रों में आरंभ हुआ है; और (ii) उन क्षेत्रों में गैर-कृषिक क्षेत्र की तीव्र प्रगति के लिए उपयुक्त दशाओं की उपस्थिति होना।

फोस्टर-रोजेनस्विग अभिकल्पना

फोस्टर और रोजेनस्विग (2004) ने गैर-कृषिक क्रियाकलापों की व्यापारित और गैर-व्यापारित किस्मों में अंतर करने की वैकल्पिक अभिकल्पना की। जबकि गैर-व्यापारित तो स्थानीय अर्थव्यवस्था के विकास की एक प्रशाखा है, स्थानीय विकास के साथ व्यापारित भाग का जुड़ा होना आवश्यक नहीं है। ग्रामीण क्षेत्रों में व्यापारिक गतिविधि का विकास स्थानीय अर्थव्यवस्था में बाहर से आई पूँजी निवेश का परिणाम हो सकता है जो सस्ती मज़दूरी पर उपलब्ध अतिरिक्त श्रम चाहते हैं। इसलिए कम भूमि उत्पादकता के निम्न मज़दूरी क्षेत्र ऐसा निवेश आकर्षित कर सकते हैं जिससे आकर्षण प्रभाव किस्म का गैर-कृषिक विकास हो सकता है। गैर-कृषिक रोज़गार का अनुपात ऐसे क्षेत्रों में अधिक हो सकता है, जहां बाह्य पूँजी आकर्षित हुई है। यह मेल्लोर द्वारा सुझाए गए उच्चतर कृषिक प्रौद्योगिकी के फलस्वरूप आय वृद्धि के प्रभाव से कहीं भिन्न है। जॉनस्टन मेल्लोर अभिकल्पना और फोस्टर-रोजेनस्विग विकल्पों के बीच बुनियादी अंतर यह है कि पहले मामले में उच्चतर ग्रामीण मज़दूरी/आय के निहितार्थ होंगे, जबकि दूसरे मामले में मजदूरी आय प्रभाव का कोई खास पूर्वानुमान स्वतः नहीं हो सकता है, क्योंकि, ये श्रम बाजार विस्तार के अन्य कारकों पर निर्भर होगा।

भारत में हरित क्रांति का प्रभाव केवल कुछ ही राज्यों में महसूस किया गया। कई अन्य राज्यों को उसके प्रभाव से बाहर छोड़ा गया। इस दृष्टि से जॉनस्टान-मेल्लोर अभिकल्पना की मान्यता, जिनका उल्लेख पंजाब जैसे समृद्ध कृषि प्रौद्योगिकी आधारित क्षेत्रों में किया गया है, अन्य स्थानों में नहीं देखी गई है। यह भारत में ग्रामीण औद्योगिकीकरण प्रगति/लाभ के असमान विस्तार के कारणों का भी संकेत देता है। फिर भी ये अभिकल्पनाएँ उन भिन्न-भिन्न दशाओं की संभावना भी स्पष्ट करती है जिनमें गैर-कृषिक फार्म सेक्टर की संवृद्धि के लिए प्रोत्साहन प्राप्त हो सकते हैं।

10.6 भावी नीति के लिए रणनीति

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि ''अतिलघु (या माइक्रो), मध्य आकार की इकाइयों (जिन्हें उच्चतर पूँजी अनुप्रेरण से छोटी इकाइयों को आधुनिक शहरी उद्यमों के लगभग सदृश्य समझा जाता है) को प्रोत्साहित करने की नीतियों को निम्नलिखित पर फोकस करना चाहिए –

1) लघु उद्यमों या स्थापनाओं को प्रोत्साहित करने के विश्वभर में समूह दृष्टिकोण का अनुसरण किया गया है। भारत में यह प्रयोग क्षेत्रीय दृष्टिकोण पर फोकस के साथ किया गया था। यह कहा जाता है कि प्रादेशिक या स्थानिक कठिनाइयों के कारण यह असफल रहा। इस स्थिति को ''उत्पादन समूहों'' को ''नवीनतायुक्त समूहों'' में रूपांतरित करने के लिए अपेक्षित प्रौद्योगिकीय गत्यात्मकता से सुधारा जा सकता है। समूहों के निर्माण से ग्रामीण कारीगरों को अपने बहुत से आकार और मात्रा विशिष्ट अवरोध हटाने में सहायता मिलेगी।

2) व्यापार और उत्पादन में नवीनता को समर्थन देने के मुख्य पहलुओं में एक उद्यमों को बिजली की आपूर्ति सुनिश्चित करना है। यह एक ही अकेली बाधा भारत के संदर्भ में अत्यधिक गहन है। यह तर्क दिया गया है कि इस गंभीर बाधा के निवारण का भरोसा उद्यमों की उत्पादकता सुधारने में बहुत महत्त्वपूर्ण सिद्ध होगा।

3) क्षेत्रीय विकास के परिप्रेक्ष्य से 'समूह' की प्रौद्योगिकीय क्षमता मुख्यतः स्थानीय स्थायी सामर्थ्य जैसे सामाजिक, भौतिक और आर्थिक आधारभूत संरचना द्वारा निर्धारित की जाती है। बहुत से मामलों में, या तो नव प्रणवन की प्रणाली घटिया ढंग से तैयार की जाती है या बिल्कुल विद्यमान ही नहीं होती। सार्वजनिक प्रशिक्षण संस्थाएँ जैसे 17%, ग्रामीण औद्योगिक उपक्रमों को उपयुक्त प्रशिक्षण देने में अधिक सहायक नहीं है। संस्थाओं, नियमों और शासन व्यवस्था को पूरी तरह से पुनः अभिकल्पना आवश्यक है।

4) स्थापित किए जाने वाले ग्रामीण उद्योगों की आवश्यकताओं के प्रौद्योगिकीय पहलुओं के अनुकूल विशेषज्ञ संस्थाओं और विश्वविद्यालयों में अनुसंधान से अपेक्षित सहक्रिया स्थापित की जानी चाहिए। इस संदर्भ में ''एक गांव एक उत्पाद'' जैसा कि जापान और थाईलैंड में सफलतापूर्वक क्रियान्वित हुआ है, की प्रासंगिकता पर उत्पाद संवर्धन और विपणन आवश्यकताओं के लिए नेटवर्किंग में उपयुक्त सहायता के विस्तार पर विचार करना आवश्यक है।

5) ग्रामीण उद्योग उत्पादों की विविधता, कार्य के पैमानों, मार्केट विस्तार आदि का विशाल समूह है। शिल्पकारी सेक्टरों में सभी प्रकार की छोटी-छोटी इकाइयों की विशाल संख्या है जिनमें स्थानीय मांग पूर्ति की नम्यता और क्षमता है। ग्रामीण औद्योगिकीकरण के स्थायी विकास के लिए सबसे सुदृढ़ तर्क स्थानीय मांग संभावना का संवर्धन है। बहुत से शिल्पि और छोटे-छोटे उद्यम के सेवा प्रवाहों और प्रौद्योगिकी आपूर्तिकर्ताओं के बीच समुचित समन्वय के अभाव के कारण शुरू की गई बहुत योजनाओं के लाभ से वंचित रह गए हैं। लचीली और समावेशी दृष्टिकोण फार्म और नॉन-फार्म सेक्टरों के बीच प्रतीकात्मक समन्वय प्रोत्साहित कर टिकाऊ बनाने में सहायक हो सकता है।

6) उत्पन्न की जा रही प्रौद्योगिकी और ग्रामीण उद्यमों को उसकी सुलभता के बीच बड़ी **असंबद्धता** विद्यमान है। ग्रामीण प्रौद्योगिकी संस्थानों (RTIs) द्वारा विकसित प्रौद्योगिकी को व्यापक आधार पर अपनाने के प्रयास सीमित रहे हैं तथा घटिया तरीके से नियोजित/निष्पादित हुए हैं। ग्रामीण औद्योगिकीकरण नीतियाँ न केवल उत्पादन क्षेत्र में नवाचारी प्रकृति प्रवर्तन के लिए रणनीतिक तरीके में क्रियान्वित होनी चाहिए, बल्कि, उत्पादकता सुधार के लिए व्यापक आधार का कौशल प्राप्ति में भी सहायक होनी चाहिए।

7) ग्रामीण औद्योगिकीकरण का विषय बहुत से सरकारी विभागों/मंत्रालयों जैसे उद्योग/मंत्रालय, कृषि और ग्रामीण उद्योग विभाग, ग्राम विकास मंत्रालय, खाद्य संसाधन उद्योग विभाग आदि द्वारा नियंत्रित किया जाता है। इन संस्थाओं में समुचित समन्वय के अभाव के फलस्वरूप देश में ग्रामीण औद्योगिकीकरण की प्रगति धीमी रही है। इसलिए देश में ग्रामीण औद्योगिकीकरण का संवर्धन करने वाले विभिन्न कार्यकलापों के बीच समुचित समन्वय स्थापित करने पर फोकस करना महत्त्वपूर्ण है।

बोध प्रश्न 3

नीचे दिए स्थान में लगभग 50 शब्दों में उत्तर दीजिए।

1) ग्रामीण गैर कृषिक सेक्टर (RNFS) की सफल वृद्धि के लिए पूरी की जाने वाली अपेक्षित पूर्व शर्तों के रूप में पहचान किए गए दो मुख्य कारक क्या हैं?

.....

.....

.....

2) वर्तमान समय में भारतीय RNFS संवृद्धि की किस अवस्था में है?

.....

.....

.....

3) वह आधारभूत सिद्धांत क्या था जिस पर जॉनस्टन मेल्लौर ने (RNFS) की संवृद्धि की अपनी अभिकल्पना आधारित की थी? फोस्टर-रोजेनस्विग द्वारा प्रस्तावित विकल्प क्या था? इन दोनों में से किसे भारतीय दशाओं में विद्यमान होना देखा गया है और क्यों?

.....

.....

.....

10.7 सारांश

भारतीय कृषि में अल्परोज़गार की व्यापकता अच्छी तरह से स्वीकार की गई है और इस दशा के उन्मूलन के लिए ग्रामीण गैर-फार्म कार्यों को प्रोत्साहित करने के लिए कई उपाय प्रारंभ किए गए थे। निश्चित औद्योगिकीकरण नीतियों और कार्यक्रमों के माध्यम से ग्राम विकास आगे बढ़ाने के लिए सक्रिय सरकारी सहायता का महत्त्व 1940 के दशक के बाद से स्वीकार किया गया है परंतु ग्रामीण सेक्टर में विभिन्नताएँ इस प्रकार हैं कि वास्तविक क्रियान्वयन में बहुत ''छोटे'' या माइक्रो इकाइयों (विनिर्माण में कुल रोज़गार का लगभग 86 प्रतिशत रोज़गार देता है) को बहुत सी योजनाओं और कार्यक्रमों से प्रभावशाली ढंग से लाभ प्राप्त करने से वंचित किया जाता है। छोटी इकाइयों को अपने उत्पादों को बढ़ाने के लिए प्रतिस्पर्धा के दायित्व ने बहुत से ग्रामीण औद्योगिक इकाइयों को अपनी पहुंच या नियंत्रण के लिए बाहरी ताकतों को अधिक संवेदनशील बना दिया है। अब तक अनुप्रयुक्त प्रथाओं से आमूलचूल पुनःअभिविन्यास के लिए आवश्यक वैकल्पिक नीतिगत रणनीति समय की जरूरत है। सेवा प्रदाताओं और बहुत छोटी इकाइयों में सहयोग, उत्पादकता सुधार के लिए व्यापक आधार का कौशल, संवेदनशील सरकारी सहायता पर आधारित समावेशी दृष्टिकोण आदि विकसित करने, बहुत छोटी/मध्यम इकाइयों के लिए उपयुक्त प्रौद्योगिकी के विकास और हस्तांतरण पर बल के साथ समूह दृष्टिकोण का अनुसरण सभी ऐसी वैकल्पिक रणनीति के महत्त्वपूर्ण तत्व है।

10.8 शब्दावली

ग्रामीण कारीगर : इसमें दस्तकारी और हथकर्घा बुनकर शामिल हैं। इनसे अभिप्राय परंपरागत कौशल और पारिवारिक श्रम तथा कम पूँजी लगाकार कार्य संचालन से है। यह ''स्व-संचलित उद्यमों'' तथा उन छोटी स्थापनाओं के समान हैं जो कम संख्या में (5 से कम) भाड़े पर कामगारों को रोज़गार देते हैं, सरकारी शब्दावली में ये 'निदेशिका इतर' स्थापनाएँ कहलाती हैं।

ग्रामीण नॉन-फार्म सेक्टर : इसमें सभी कृषीतर कार्य शामिल हैं, जैसे पारिवारिक/ गैर पारिवारिक उद्यमों से कारखानों तक भिन्न-भिन्न आकार के उद्यमों द्वारा शुरू किए गए गांवों और ग्रामीण कस्बों में खनन और खादान, विनिर्माण, प्रसंस्करण, मरम्मत, निर्माण कार्य, व्यापार और वाणिज्य, परिवहन और अन्य सेवाएँ।

तेज़ी से बढ़ता हुआ उपभोक्ता माल : ये उन उत्पादों, जैसे, प्रसाधन साबुन, अचार, शहद आदि के लिए प्रयुक्त किया जाता है, जिनके लिए विशाल घरेलू मांग होती है और उनमें से अधिकांश का उत्पादन ग्रामीण क्षेत्रों में बहुत छोटे उद्यमों/इकाइयों में हो सकता है या हो रहा है।

ग्राम उद्योग : ग्रामीण क्षेत्रों में स्थित कोई भी उद्योग बिजली उपयोग कर या न करके माल या सेवाओं का उत्पादन कर रहा हो जिसमें प्रति कारीगर या श्रमिक निश्चित पूँजी निवेश (अर्थात् संयंत्र और मशीनरी भूमि, भवन आदि) विनिर्दिष्ट उच्चतम सीमा से अधिक न हो।

खादी और ग्राम उद्योग : उद्योगों का अभिप्राय ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय संसाधन आधारित उत्पादों और परंपरागत शिल्प को प्रोत्साहन देना है। ग्रामीण क्षेत्र जनसंख्या को ध्यान में रखे बिना राज्य के राजस्व रिकार्डों के अनुसार ग्राम के रूप में वर्गीकृत कोई भी क्षेत्र है। यह उन क्षेत्रों को भी शामिल करता है जिन्हें कस्बों के रूप में वर्गीकृत किया गया है परंतु उसकी जनसंख्या 20,000 से अधिक नहीं है।

खाद्य पार्क : ये खाद्य प्रसंस्करण मंत्रलाय द्वारा पूँजी प्रधान सामान्य सुविधाएँ जैसे शीत भंडारण, गोदाम (वेयर हाऊस) गुणवत्ता नियंत्रण प्रयोगशालाएँ, निस्सारी उप-संयंत्र आदि में समीपवर्ती संसाधन इकाइयों को प्रदान करने के लिए देश के भिन्न-भिन्न भागों में स्थापित किए गए हैं।

10.9 कुछ उपयोगी पुस्तकें

Chadha G. K., and Sahu, P. P. (2005): "Rural Industrialisation in India: A Critical Assessment of Policy Perspectives", in *Rural Transformation in India: The Role of Non-Farm Sector* ed. By Rohini Nayyar and Alakh N. Sharma, Institute of Human Development, New Delhi, pp. 395-414.

Das, Keshab (2009): "Broad-basing Rural Industrialisation in India: Approaches and Challenges", Working Paper (SIID-01/2009), Gujarat Institute of Development Research, Ahmedabad.

Mazumdar Dipak & Sarkar Sandip (2008): Globalization, Local Markets and Inequality in India, Routledge Studies in the Growth Economies of India, NY. Pp. 154-156.

10.10 बोध प्रश्नों के उत्तर/संकेत

बोध प्रश्न 1

1) देखिए भाग 10.2 और उत्तर दीजिए।

2) प्राथमिक/माध्यमिक/तृतीयक, संगठित/असंगठित–पारिवारिक, सार्वजनिक/ निजी, नॉन फार्म/ ऑफ फार्म, नौ औद्योगिक श्रेणियों के लिए; देखिए भाग 10.2, ''उद्योग'' पर पैरा और उत्तर दीजिए।

3) देखिए भाग 10.2 और उत्तर दीजिए।

4) देखिए भाग 10.2 और उत्तर दीजिए।

बोध प्रश्न 2

1) देखिए भाग 10.3, I/II योजना अवधि पर पैरा और उत्तर दीजिए।

2) देखिए भाग 10.3, VI/III योजना अवधि पर पैरा और उत्तर दीजिए।

3) देखिए भाग 10.4 VI/VII योजना अवधि पर पैरा VIII योजना अवधि तथा उत्तर दीजिए।

4) देखिए भाग 10.3, IX/X/XI योजना अवधि और उत्तर दीजिए।

5) देखिए भाग 10.4 और उत्तर दीजिए।

बोध प्रश्न 3

1) देखिए भाग 10.3 और उत्तर दीजिए।

2) देखिए उपभाग 10.5.1 (अंतिम पैरा) और उत्तर दीजिए।

3) देखिए उपभाग 10.5.2 और उत्तर दीजिए।

4) देखिए उपभाग 10.5.2 (अंतिम पैरा) और उत्तर दीजिए।

5) देखिए भाग 10.6 और उत्तर दीजिए।